उपसंहार

उपसंहार

रांगेय राघव आँचलिक उपन्यासकारों में एक महत्वपूर्ण उपन्यासकार है। 'कब तक पुकारूँ' रांगेय राघव का आँचलिक विषायवस्तु को लेकर लिखा हुआ उपन्यास है। यह एक विशेषा तथा बृहत उपन्यास है, जिसे उत्तर प्रदेश शासन द्वारा पुरस्कृत किया गया है। इस आँचलिक उपन्यास में करनटों के जीवन का यथार्थ अंकन वर्णनात्मक शैली में किया गया है। इस उपन्यास में आर्थिक वैषाम्य के कारण निर्मित शोषाण की समस्या, पुलिसी अत्याचार तथा नारी-समस्या को प्रस्तुत किया गया है।

रांगेय राघव नई पीढी के आँचलिक उपन्यासकारों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। मध्यवर्ग का जीवन-चित्रण उनके उपन्यासों का प्राण है।

रांगेय राघव का बचपन आगरे के बागमुजफ्फरखाँ में बीता है। माता-पिता और भाई के अतिरिक्त उनके परिवार में श्रवणकुमार नामक सेवक का भी समावेश था। उनकी शिक्षा आगरा में हुई। 'एम.ए. (हिन्दी) की उपाधि उन्होंने १९४४ ई. में प्राप्त की। एम.ए. के उपरान्त उन्होंने पीएच.डी. उपाधि के हेतु अपना नाम आगरा विश्वविद्यालय में पंजीकृत किया। यह कार्य उन्होंने १९४८ में पूरा किया। इस समय उनकी अवस्था २५ वर्षों की थी। शिक्षा के अतिरिक्त उन्होंने चित्रकला, संगीत, इतिहास, पुरातत्व आदि विषायों का गहरा अध्ययन किया है। इसके साथ-ही-साथ उन्होंने विभिन्न मासिक पत्रिकाओं का सम्पादन कार्य किया है। उनका व्यक्तिमत्व विविध पहलूओं से आकर्षक और सुन्दर था। लम्बा शरीर, शार्प चेहरा, उन्नत और स्निग्ध ललाट, लम्बी एवं नुकीली नाक, चमकाशो की हुई मुस्कराती मवें, सतेज विशाल नेत्र, जिसमें कभी-कभी शरारत भी बलक जाती। उनकी वेशभूषा साधारण थी। वे प्राय: कुर्ता और पायजामा ही पहनते थे। पिताजी के मौत के बाद उन्हें आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पडा। राघवजी के जीवन की यात्रा आगरे से

शुरू हुई और बम्बई तक आते-आते समाप्त हो गई।

द्वितीय अध्याय में 'अँचल' शब्द की व्युत्पत्ति कब हुई और उसकी परिभाषा किसप्रकार से दी गई है इसका विश्लेषण दिया है। बाद में आँचलिक उपन्यास साहित्य की विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। आँचलिक उपन्यास की अपनी अलग विशेषताएँ रहती है। साथ-ही-साथ आँचलिक उपन्यास के तत्व भी महत्वपूर्ण होते हैं। जैसे, आँचलिक उपन्यासों में देश, काल और वातावरण यह प्राणतत्व होता है। इसका विस्तृत विश्लेषण यहाँ किया जा रहा है।

तृतीय अध्याय में आँचलिक उपन्यास साहित्य का इतिहास दिया है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में आँचलिक उपन्यासों की प्रदीर्घ परम्परा समीक्षकों द्वारा स्थापित की गई है। किन्तु आँचलिकता की प्रवृत्ति के लक्षणों के अनुसार ये सही अर्थ में आँचलिक उपन्यास नहीं है। कई उपन्यासों में केवल एक या दो लक्षण पाएँ जाते हैं। इसलिए वे आँचलिक नहीं बन सकते। कई उपन्यासों में आँचलिकता का आभास मात्र मिलता है। सच्चे एवं आधुनिक अर्थ में आँचलिक उपन्यास कम लिखे गएँ है और उनमें भी श्रेष्ठ आँचलिक उपन्यासों की संख्या कम है। उपन्यासों में प्राप्त आँचलिकता की प्रवृत्ति का उचित मूल्यांकन उसके लक्षणों एवं विशेषताओं के आधार पर ही किया जाना चाहिए।

जन-जीवन की परम्पराओं, रीति-रिवाजों, त्योहारों एवं प्राकृतिक वातावरण का परिणाम व्यक्ति के जीवन पर अनिवार्य रूप से हुआ करता है। इसीलिए उनका अध्ययन आँचलिक उपन्यासों में आवश्यक हो जाता है। इस 'अँचल' की एक वैशिष्टयपूर्ण सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, नैतिक या आर्थिक मूल्यों से निर्मित समाज व्यवस्था होती है। यही समाज-व्यवस्था अनन्तर स्वाभाविक एवं सौन्दर्ययुक्त प्रतीत होती है। आँचलिक उपन्यासकार जन-जीवन की समग्र-संस्कृति के चित्रण द्वारा इसी सजीवता एवं सुन्दरता का उद्‌घाटन करते हैं। विकसशील राष्ट्र की यांत्रिक एवं औद्योगिक समाज-व्यवस्था में विशुध्द मानवीय भाव-सौन्दर्य

की उत्कट अनुभूति आँचलिक उपन्यासों का एक महत्वपूर्ण योगदान है।

चतुर्थ अध्याय में 'कब तक पुकारूँ' उपन्यास में आँचलिक तत्वों को लेकर समीक्षा की गई है। 'कब तक पुकारूँ' यह एक सफल आँचलिक उपन्यास है। राजस्थान और ब्रज में फैली करनट जाति का यथार्थ चित्रण लेखक ने अनूठे ढंग से किया है। उनकी रहन-सहन, खान-पान, तीज-त्यौहार, रूढि-परम्परा, सांस्कृतिक झाँकियाँ, अंध:विश्वास, टोने-टोटके, रीति-रिवाज अंकित किए है। देश, काल और वातावरण की दृष्टि से भी यह एक सफल आँचलिक उपन्यास है। इसमें देश, काल तथा वातावरण का औचित्य रखने के लिए भाषा का भी उचित प्रयोग किया गया है।

इसकी कथावस्तु आँचलिकता की दृष्टि से सार्थक है। पात्रों की भाषा के माध्यम से उनका आँचलिक चित्रण किया है। कथोपकथन में ही आँचलिकता दिखाई देती है। आँचलिक उपन्यासों में देश, काल तथा वातावरण यह तत्व महत्वपूर्ण रहता है। यह उपन्यास देश, काल वातावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भाषाशैली में भी आँचलिकता दिखाई देती है। उपन्यास का उद्देश्य यह है कि लेखक ने सामन्ती व्यवस्था को नए आलोक में देखा और उसे इस रूप में प्रस्तुत किया जिससे 'करनट जाति' के प्रति जन-जीवन में आस्था का भाव जगे। उन्हें मानवीय अधिकारों से बनाने का यह प्रयास है। यद्यपि जो है, उसे बदलना तो कठिन है किन्तु उसकी आवाज जब तक बुलन्द न हो तब तक परिवर्तन संभव नहीं। इस उपन्यास में मूक तथा व्यथित वर्ग को वाणी मिली है।

संक्षेप में, 'रांगेय राघव जी ने 'कब तक पुकारूँ' उपन्यास के द्वारा राजस्थान और ब्रज में फैली करनट जाति का यथार्थ चित्रण किया है। इसीलिए यह आँचलिक उपन्यास है इसमें कोई शक है ही नहीं।

अनुसंधान की उपलब्धियाँ --

१) `कब तक पुकारूँ` करनट जाति का जीवन्त चित्रण करनेवाला, हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत आँचलिक उपन्यास है। यह सारा खानाबदोष समाज शोषाण चक्र में फँसा हुआ है तथा अत्याचारों से घोर उत्पीड़ित है। यह अदिवासी समाज राजस्थान के भरतपुर जिले के आसपास एवं राजस्थान और उत्तरप्रदेश की सीमाओं को छुनेवाले अँचल में निवास करता है। सचमुच यह आँचलिक उपन्यास है।

२) इस उपन्यास का उद्देश्य यह है कि लेखक ने सामन्ती व्यवस्था को नई रूप में देखा और उसे इस रूप में प्रस्तुत किया जिससे करनट जाति के प्रति समाज में आस्था जगे। उन्हें मानवीय अधिकार देने का यह प्रयास है। यद्यपि उन्हें बदलना तो कठिन है परन्तु उनकी आवाज जब तक बुलन्द न हो तब तक परिवर्तन असम्भव है।

३) प्रस्तुत उपन्यास का नाम लेखक ने पहले `अधूरा किला` रखा था। परन्तु बाद में लेखक ने उपन्यास के नाम में परिवर्तन किया और `कब तक पुकारूँ` रखा। शायद नाम परिवर्तन में लेखक का पूर्वग्रह निहित है। लेखक ने उपन्यास के नाम में क्यों परिवर्तन किया ? यह एक प्रश्न है। क्या `अधूरा किला` नाम सार्थक नहीं हो सकता था ? यह दूसरा प्रश्न है। रांगेय राघव ने जब नाम में परिवर्तन किया ही है तो यह मानना चाहिए कि उन्होंने इस प्रश्न पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। `अधूरे किले` से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में `सुखराम` और `चंदा` का सम्बन्ध रहा है। सुखराम ठाकुर वंशीय है और उसका विश्वास है कि उक्त किला उसके पूर्वजों का है और वह उसी गौरव को लेकर जीना चाहता है। इस नाते जब-जब उस किले को देखता है तब-तब उसके मन में यह भाव उपजता है कि वह उस किले का मालिक है। साथ ही उसके मन में वंश परम्परागत अधिकार की लालसा भी जागृत होती है। इसके लिए वह उत्साहित होकर

प्रयत्न भी करता है किन्तु सफल नही हो पाता । चंदा सुखराम की मानस कन्या है । वह कुंवर नरेश ठाकुर प्यार करती है । वह भी सुखराम की भान्ति ठाकुर वंश के अधिकार एवं गौरव प्राप्त करने के लिए लालायित है । वह अपने आपको ठकुराइन महसूस करती है । परन्तु वह अपने उद्देश्य में सफल नहीं होती। इस तरह सुखराम और चंदा दोनों भी उस अधूरे किले पर अधिकर एवं गौरव प्राप्त करना चाहते हैं । परन्तु वे असफल रहते हैं । उनकी असफलता को देखकर शायद लेखक को यह लगा कि दोनों किसी-न-किसी उपलब्धि के लिए पुकार रहे हैं । यद्यपि यह पुकार सुनी नहीं गई तथापि पुकारना बंद नहीं हुआ । इसी नाते यह पुकार `कब तक पुकारूँ` के रूप में व्यक्त है ।

`कब तक पुकारूँ` नाम ही मूल में रहस्यात्मक है । यह रहस्य सुखराम और चंदा से भी जुड़ा है । उनकी पुकार कब पुरी होगी, यह निश्चित नहीं कहा जा सकता । परन्तु यह पुकार बंद नहीं होगी, थकेगी भी नहीं क्योंकि इस पुकार में अधिकार एवं गौरव की माँग प्रबल है । उसमें फिर उस माँग को भी सम्मिलित किया जा सकता है, जिनके कारण उनके अधिकारों का हनन हुआ है । इन माँगों के कारण `कब तक पुकारूँ` यह शीर्षक सार्थक है ।

अनुसंधान की नई दिशाएँ --

प्रस्तुत प्रबन्ध मैंने पारम्पारिक पध्दति को त्यागकर `रांगेय राघव के `कब तक पुकारूँ` उपन्यास में `आंचलिकता` का अध्ययन किया है । इसके अलावा निम्नलिखित विषयों पर स्वतंत्र रूप से शोधकार्य हो सकता है --

१) `कब तक पुकारूँ` उपन्यास में सामाजिक समस्याएँ ।`
२) `कब तक पुकारूँ` उपन्यास में चित्रित नारी-समस्याएँ ।`

शोध-छात्र
श्री जगन्नाथ आबासो पाटील

शोध-निर्देशक
डॉ. वसंत केशव भोरे